DSSSB TGT & PGT

Part-B

SCHOLAR BATCH

संस्कृत

अभिज्ञानशांकुन्तलम् (चतुर्थ अंक)

Part -5

LIVE 06-08-2024 05:00 PM

अभिज्ञानशाकुन्तलम् (चतुर्थ अंक)

कश्यप - (ऋकछन्दसाऽशास्ते)

कश्यप - (ऋग्वेद के छन्द से आर्शीवाद देते हैं)

अग्नी वेदिं परितः क्लृप्तधिष्ण्याः

समिद्वन्तः प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः।

अपघ्नन्तो दुरितं हव्यगन्धै-

वैतानास्त्वां वह्नयः पावयन्तु ॥8॥

अन्वय - अमी समिद्वन्तः वेदिम् परितः कलृप्तधिष्ण्याः प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः वैतानाः हव्नयः हव्यगन्धैः दुरितम् अपहान्तः त्वा पावयन्तु।

अनुवाद - यह यहा काष्ठ से सम्बद्ध वेदी के चारों ओर जिनके स्थान बने है। जिनके किनारो पर कुश बिछाया गया है जो हव्य पदार्थों के गन्धों से अनिष्ट को नष्ट कर रही है तुम्हे पावन बनाये।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक में काश्यप शकुन्तला को आशीर्वाद देते हुए कहते है कि अमी समिद्वन्तः = यह यश काष्ठो से सम्बद्ध वेदिम् परितः = वेदी के चारों ओर क्लृप्तधिष्ण्याः = जिनके स्थान बने है प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः जिनके किनारों पर कुश विछाया गया है; वैताना हवनयः = जो हव्यपदार्थों हव्यगन्धै = गन्धो से दुरितं अपहृनन्तः = अनिष्ट को नष्ट कर रही है, त्वां पावयन्तु तुम्हे पावन बनाये।

व्याकरणात्मक टिप्पणी -

समिद्धन्तः= समिधः सन्ति येषां इति, समधि + मतुप्। **प्रान्संस्तीर्णदर्भा** = प्रान्तेषु सस्तीर्णाः दर्भा येषांतं बहुवीहि । **अपहनन्तः** = अप+हन्+शतृ। प्रस्तुत श्लोक में परिकर अलंकार है तथा त्रिष्टुप वैदिक छन्द है।

प्रतिष्ठस्वेदानीम् (सदृष्टिक्षेपम) क्व ते शार्ङ्गरवमिश्राः ?

अब प्रस्थान करो (इधर उधर देखकर) शारर्गरव आदि कहां है?

(प्रविश्य) (शिष्य प्रवेश करता है)

शिष्यः - भगवन् ! इमे स्मः ।

शिष्य - भगवन ! मैं यह हूं।

काश्यप - भगिन्यास्ते मार्गमादेशय ।

काश्यप - अपनी बहन को मार्ग दिखाये। (सर्वे परिक्रमन्ति) (सब घूमते है)

काश्यप - भो भो ! संनिहितातपोवनतरवः ।

काश्यप - अरे तपोवन में स्थित वृक्षों।

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्माष्वपीतेषु या, जो

→ युष्मासु अपीतेषु

नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम् । जो

आद्ये वः कुसूमप्रसूति समये यस्या भवत्युसव: — भवति उत्सवः

सेयं याति शकुन्तला, पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम् ॥ 9॥

सा अयं

अन्वय - युष्मासु अपीतेषु या प्रथमं जलं पातु न व्यवस्यति। प्रियमण्डनापि यां भवतां स्नेहेन पल्नवम् न आदन्ते वः आद्ये कुसुमप्रसूतिसमये यस्या उत्सवः भवति। सा इयं पतिगृह याति। सर्वे अनुज्ञायताम्।

अनुवाद - जो (प्रातःकाल) आप को जल पिलाये बिना स्वयं जल पीने के लिए उद्यत नहीं होतीं; अलंकार प्रिय होने पर भी जो अति स्नेह के कारण आपके (कोमल) पल्लव को नहीं तोड़ती है,

आपके प्रथम बार फूल खिलने पर जिसका लिए उत्सव होता था; वही शकुन्तला अपने पति के गृह जा रही है आप सभी जाने की अनुमति दों।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक में शकुन्तला के जाते समय तपोवन वृक्षों से अनुमति मागता हुआ कहता है कि - **अपीतेषुया** = जो आपको जल पिलाये बिना, **प्रथमं जलं** = पहले जल, **पातुं न व्यवस्पति** = पीने के लिए उद्यत नही होती, **प्रियमण्डनापि** = अलंकार होने पर भी,

या भवतां = जो आपके, स्नेहेन = स्नेह के कारण, पल्लवम् = पल्लव को, न आदत्ते = न ही तोड़ती है, वः आद्ये = आपके प्रथमवार, कुसुमप्रसूतिसमये = फूल खिलने पर, यस्याः उतसवः भवति = जिसके लिये उत्सव का दिन होता था। सा इयं शकुन्तला = वही शकुन्तला, पतिगृह याति = पति गृह जा रही है। सर्वे अनुज्ञायताम् = आप सभी जाने की अनुमति दे।

नाटक, अलंकार एवं छन्द

(कोकिलरवं सूचयित्वा) (कोयल के कलरव की ओर सूचित करके)

(कोकिलरवं सूचयित्वा) (कोयल के कलरव की ओर सूचित करके)

अनुमतगमना शकुन्तला तरुभिरियं वनवास बन्धुभिः ।
परभृतविरूतं कलं यथा प्रतिवचनीकृतमेभिरीदृशम् ।। 10 ।।

अन्वय - इयं शकुन्तला वनबास बन्धुभिः तरुभिः अनुमतगमना यथा कलं परभृतम् एभिः ईदृशम् प्रतिवचनीकृतम्।

अनुवाद - इस शकुन्तला को तपोवन में निवास करते समय वन्धुओं ने वृक्षो के द्वारा जाने की आज्ञा दे दी गयी है। क्योकि अपने कलरव से कोयल ने इस प्रकार उत्तर दिया है।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक में शकुन्तला के मंगल विदाई के समय कोयल के मधुर कलरव के सम्बन्ध में कहा गया है कि - इयं शकुन्तला = इस शकुन्तला को, वनबास बन्धुभिः = तपोवन में निवास करते समय बन्धु बने हुए, तरुभिः = वृक्षों के द्वारा,

अनुमतगमना = जाने की अनुमति दे दी गयी है, यथा = क्योकि जैसे, कलरवभृतविरुतम् = अपने कलरव से कोयल, एभिः ईदृशं = इस प्रकार, प्रतिवचनीकृतम = उत्तर दिया है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी -

अनुमतगमना = अनुमतं गमनं यस्याः सा (बहु०), प्रतिवचनीकृतम् = प्रतिवच चि + कृ + क्त। प्रस्तुत श्लोक में परिणाम अलंकार है तथा अपरवक्त्र नामक छन्द है।

(आकाशे)

(आकाश से)

रम्यान्तरः कमलिनीहरितैः सरोभि -
छायाद्रुमैर्नियमितार्कमयूखतापः ।
भूयात्कुशेशयरजोमृदुरेणुरस्याः
शान्तानुकूलपवनश्च शिवश्च पन्थः ।।११।।

अन्वय - अस्या: पन्था: कमलिनीहरितै: सरोभि: रम्यान्तर: छायान्द्रुमै: नियमितार्कमयूखताप: कुशेशयरजोमृदुरेणु: शान्तानुकूलपवन च शिव: च भूयात्।

अनुवाद - इसका मार्ग कमलिनियों से हरे बनें हुए सरोवरों के कारण मध्य भाग में सुन्दर, घनी छाया वाले वृक्षों के द्वारा अल्प किये गये सूर्य के ताप वाला कमल पराग के समान कोमल धूलि से युक्त, शान्त एवं अनुकूल समीर वाला तथा मंगलकारी हो।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक में आकाशवाणी के माध्यम से शकुन्तला को आशीर्वाद दिया गया है कि- अस्याः पन्थाः इसके मार्ग, कमलिनीहरितैः कमलिनी से हरे, सरोभिः सरोवरो के कारण, रम्यान्तरः = मध्य भाग में सुन्दर, छायाद्रुमैः घनी छाया वाले वृक्षों के द्वारा, नियमितार्कमयूखतापः = अल्प किये गये सूर्य के ताप द्वारा, कुशेशयरजोमृदुरेणुः कमल पराग के समान कोमल धूलि से युक्त, शान्तानुकूलपवन च शान्त एवं समीर वाला, शिवः च भूयात् तथा मंगलकारी हो।

व्याकरणात्मक टिप्पणी - कमलिनीभिः हरितैः (तत्पु०) रम्यान्तरः रम्यं अन्तरं यस्य स यथोक्तः (बहु०) कुशेशयः कुशे+शी अच्। शान्तानुकूलपवनः = शान्तश्चासौ अनुकूलश्च शान्तानुकूलः शान्तानुकूलः पवनः यास्तिन प्रस्तुत श्लोक में तुल्योगिता, परिकर, काव्यलिंग, वृत्यनुप्रास तथा श्रुत्यनुप्रास अलंकार है तथा वसन्ततिलका छन्द है।

5.4 अभिज्ञान शाकुन्तलम् चतुर्थ अंक, श्लोक संख्या 12 से 22 तक

(अर्थ, व्याख्या एवं व्याकरणात्मक टिप्पणी)

(सर्वे सविस्मयमाकर्णयन्ति) (सब विस्मय पूर्वक सुनते है)

गौतमी - जाते ! ज्ञातिजनास्निग्धाभिरनुज्ञातगमनासि तपोवन देवताभि। प्रणम् भगवतीः।

गौतमी - बेटी ! बन्धुजनों के समान स्नेह करने वाली तपोवन की देवियों ने तुम्हे जाने की अनुमती दे दी है। इन देवियों को नमस्कार करो।

शकुन्तला - (सप्रणामं परिक्रम्य जनान्तिकम्) हला प्रियंवदे ! नन्वार्यपुत्रदर्शनोत्सुकायाः अप्याश्रमपदं परित्यजन्त्या दुःखेन मे चरणौ पुरतः प्रवर्तते।

शकुन्तला - (प्रणाम पूर्वक घूमकर हाथो के ओट से) सखि प्रियंवदा आर्यपुत्र के दर्शनार्थ व्याकुल होने पर भी आश्रम स्थान को छोड़ते हुए मेरे पैर बड़े दुःख के साथ आगे बढ रहै है।

प्रियंवदा - न केवलं तपोवनविरहकातरा सखयेव । त्वयोपास्थितवियोगस्थ तपोवनस्यापि तावत्समवस्था

प्रियंवदा - केवल सखि ही तपोवन के वियोग से व्याकुल नही है। तुमसे इस समय वियोगित होने वाले तपोवन की भी समान अवस्था दिखई पड़ रही है।

उदगलितदर्भकवला। मृग्य: परित्यक्तनर्तना मयूरा: ।
अपसृतपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लता: ।१२।।

अन्वय - गृग्य: उद्गलितदर्भकवला: मयूरा परित्यक्त नर्तना: लता अपसृतपाण्डुपत्रा: अश्रूणि मुन्चयन्ति इव ।

अनुवाद - हरिणियों ने कुश के ग्रास उगल दिये है, मोरो ने नृत्य करना छोड़ दिया है। पीले पत्तों का त्याग करती हुयी लताए मानो अश्रु बहा रही है।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक में कवि प्रकृति की मानवीय रूप मे उत्प्रेक्षा करता हुआ कहता है कि - मृग्यः = हरिणियों ने, उद्गलितदर्भकवलाः = कुश ने ग्रास उगल दिये है, मयूरा परित्यक्त नर्तनाः = मोरो ने नृत्य करना छोड़ दिया है, लता = वन की लताएँ अपसृतपाण्डपत्राः = पीले पत्तो का त्याग करती हुयी लताए, अश्रूणि मुन्चयन्ति इव = मानो अश्रु बहा रही है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी -

उदगलितदर्भकवला = उदगलितः दर्भाणां कवलः याभिः ताः (बहु०) परित्यक्त नर्तना = परित्यक्तः नर्तनं यस्ते (बहु०) अपसृमपाण्डपत्रा मन्चन्त्यश्रणीव लताः प्रस्तुत श्लोक में समासोक्ति तथा उत्प्रेक्षा अलंकार है ओर आर्या छन्द है।

शकुन्तला - (संस्मृत्वा) तात ! लताभगिनीं वनज्योत्स्नां तावदामन्त्रयिष्ये।

शकुन्तला - (कुछ याद कर) ! पिताजी ! लताभगिनी वनज्योत्सना से तब तक विदा ले लूँ।

काश्यप - अवैमि ते तस्यां सोदर्यास्नेहं। इयं तावद्दक्षिणेन।

काश्यप - मैं समझ रहा हूँ। तुम्हारा उससे सहोदर जैसा प्रेम है। यह तुम्हारे दाहिनी तरफ है।

शकुन्तला - (लतामुपेत्यालिङ्ग्य) वनज्योत्सने ! चूतसंगतापि मां प्रत्यालिंगेतोगताभिः शाखाबहाभिः । अद्य प्रकृति दूरपरिवर्तिनी भविष्यामि।

शकुन्तला - (लता के पास जाकर आलिंगन कर) हे वनज्योत्सने! आम के साथ लिपटी होने पर भी बाहर निकली शाखा रुपी भुजायों से गले मिलो। सम्भव मै दूर देश गामिनी हो रही हूँ।

काश्यप -

संकल्पितं प्रथममेव मया तवार्थे

भर्तारमात्मसदृशं सुकृतैर्गता त्वम् ।

चूतेन संश्रितवती नवमालिकेय-

मस्यामहं त्वयि च संप्रति वीतचिन्तः ॥ 13॥

अन्वय - मया तवार्थे प्रथमं एव संकल्पितं आत्मसदृश भर्तार सुकृतैः गता। इयम् नवमालिका चूतेन संश्रितवती । सम्प्रति अहं अस्यां च, त्वयि च, बीतचिन्तः।

अनुवाद - मेरे द्वारा तुम्हारे लिए जिस प्रकार के पति की संकल्पना की गयी थी वैसे ही अपने योग्य पति को तुमने अपने पुण्य कर्मो से प्राप्त किया। यह नवलतिका ने आम्र वृक्ष का सहारा पा लिया। इस समय इसके प्रति तथा तुम्हारे प्रति मै चिन्ता रहित हो गया हूँ।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक में काश्यप शकुन्तला तथा नवमलिका लता के प्रति निश्चिंतता का अनुभव करते हुए कहते है कि - **मया** = मेरे द्वारा, **तवार्थे** = तुम्हारे लिए, **प्रथमं एव संकल्पितं** = जिस प्रकार के पति की संकल्पना की थी, **आत्मसदृश** = (वैसा) अपने योग्य, **भतरि** = पति को तुम, **सुकृतैः गता** = अपने पुण्य कर्मों से प्राप्त किया, **इयम् नवमालिका** = यह नवमालिका ने, **चूतेन संश्रितवती** = आम्र वृक्ष का सहारा पा लिया। **संप्रति** = इस समय अहं अस्यां च = इसके प्रति त्वयि च = और तुम्हारे प्रति, **बीतचिन्तः** = चिन्ता रहित हो गया है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी - आत्मसदृशम् = आत्मनः सदृशय (तत्पुरूष) संश्रितवती = संश्रितम, अस्तीति संश्रितवती, बीतान्तिः = वीता चिन्ताः यस्य (बहु०) प्रस्तुत श्लोक में तुल्योगिता, समासोक्ति, तथा काव्यलिंग अलंकार है तथा बसन्ततिलका छन्द है।

इतः पन्थानं प्रतिपद्यस्व - इधर से प्रस्थान करो।

शकुन्तला - (सख्यौ प्रति) हला। एषा द्वयोयुवयोर्ननु हस्ते निक्षेपः ।

शकुन्तला - (दोनों सखियों के प्रति) सखि ! इसको तुम दोनो को धरोहर के रूप में सौप रही हूँ।

संख्यौ - अयं जने कस्य हस्ते समर्पित:? (इति वाष्पं विहरत:)

दोनों सखियाँ - हम लोगों को किसेके हाथ मे दे रही हो (इस प्रकार रोने का अभिनय करती है)

काश्यप - अनुसूये ! अलं रूदित्वा। ननु भवतिभ्यामेव स्थिरीकर्तव्या शकुन्तला।

काश्यप - अनुसूया ! रोना बन्द करो। तुम दोनों को ही शकुन्तला को ढाढस दिलाना है।

(सर्वे परिक्रामन्ति) (सभी रंग मंच पर घूमते है)

शकुन्तला - तात ! एषोटजपर्यन्तचारिणी गर्भ मन्थरा मृगवधूर्यदानघप्रसवा भवति तदा मह्यं कंमपि प्रियनिवेदयितृक विसर्जयिष्यथ ।

शकुन्तला - पिता जी ! आश्रम के चारो ओर विचरण करने वाली गर्भ धारण करने से जिसकी गति मन्द है यह मृगवधू कष्ट रहित प्रसव के बाद मेरे समीप इस शुभ समाचार हेतु किसी को भेजिएगा।

कश्यप - नेदं विस्मरिष्यामः ।

कश्यप - यह नहीं भूलूंगा।

शकुन्तला - (गति भङ्ग रूपयित्वा) को नु खल्वेष निवसने मे सज्जते ?

शकुन्तला - (लड़खड़ाने का अभिनय कर) कौन है जो मेरे वस्त्र को खीच रहा है?

(इति परावर्ते) (इस प्रकार घूमती हैं)

काश्यप - वत्से ! काश्यप - पुत्री !

यस्यत्वयां व्रणविरोपणमिङ्गुदीनां
तैलं न्यषिच्यत मुखे कुश सूचिविद्धे।
श्यामाकमुष्टिपरिवर्धितको जहाति
सोऽयं न पुत्रकृतकः पदवीं मृगस्ते ।।1 4।।

अन्वय - यस्य कुशसूचिविद्धे मुखे त्वया व्रणविरोपनम् इंगुदीनां तैल न्यषिन्यत सः अर्थ श्यामाकमुष्ठिपरिवर्धितकः पुत्रकृतकः मृगः ते पदवीं न जहाति।

अनुवाद - जिसके कुशों के तीक्ष्ण अग्रमात्र से कंटे हुए मुख मे तेरे द्वारा घावभरने वाला इंगुदी नामक तेल लगाया गया था और जिसे श्यामाक की मुट्ठी खिला-खिलाकर स्नेह के साथ पाल - पोस कर बढ़ाया था, वही पुत्र बना मृग तेरा मार्ग नहीं छोड़ रहा है।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक मे मृगछौना द्वारा शकुन्तलाके वसन खीचे जाने के बाद काश्यप् कहते है कि **यस्य** = जिसके, **कुशसूचिविद्धे** = कुशोके तीक्ष्ण अग्रमाग से कटे हुए, **मुखे** = मख में, **त्वया** = तेरे द्वारा, **व्रणविरोपनम्** = घावभरने वाला, **इंगुदीनां तैल** = इंगुदी नामक तेल, **न्याषिन्यत्** = लगाया गया था। **स: अथं** = वही, **श्यायाकयुष्ठिपरिवर्धितक:** = श्यामाक की मुठी खिला खिलाकर स्नेह के साथ पाल - पोस कर बढ़ाया गया था, **पुत्रकृतक:** = पुत्र बना, **मृग: मृग ते पदवी** = तुम्हारा मार्ग, न जहाति नही छोड़ रहा है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी -

व्रणविरोपणम् = व्रणानां विरोपणम् वि रूप+णिच् + ल्युट्

कुशसूचिविद्धे = कुशानां सूचिमिः विदधे कुशसूचि विद्धे (तत्पु०)।

न्यषिच्यत = निसिच्+अड़ प्रस्तुत श्लोक मे छेकानुप्रास, वृत्यनुप्रास, तथा काव्यलिंग अलंकार है और बसन्तलिलका छन्द है।

शकुन्तला - वत्स। किं सहवास परित्यागिनीं मामनुसरसि ? अचिरप्रसूतया जनन्या विना बर्धितोऽसि । इदानीमपि मया विरहितं त्वां तातश्चिन्तयिष्यति। निवर्तस्व तावत् ।

शकुन्तला - पुत्र! एक साथ निवास को छोड़ने वाली मेरा अनुसरण कर रहे हो? जन्म लेते ही विना मा के रहने पर तुम्हे मैने बढाया है। इस समय भी मेरे न रहने पर पिता जी तुम्हारा ध्यान रखेगे। अतएव लौट जावों।